दैनिक जीवन में योग

स्वामी चिदानन्द

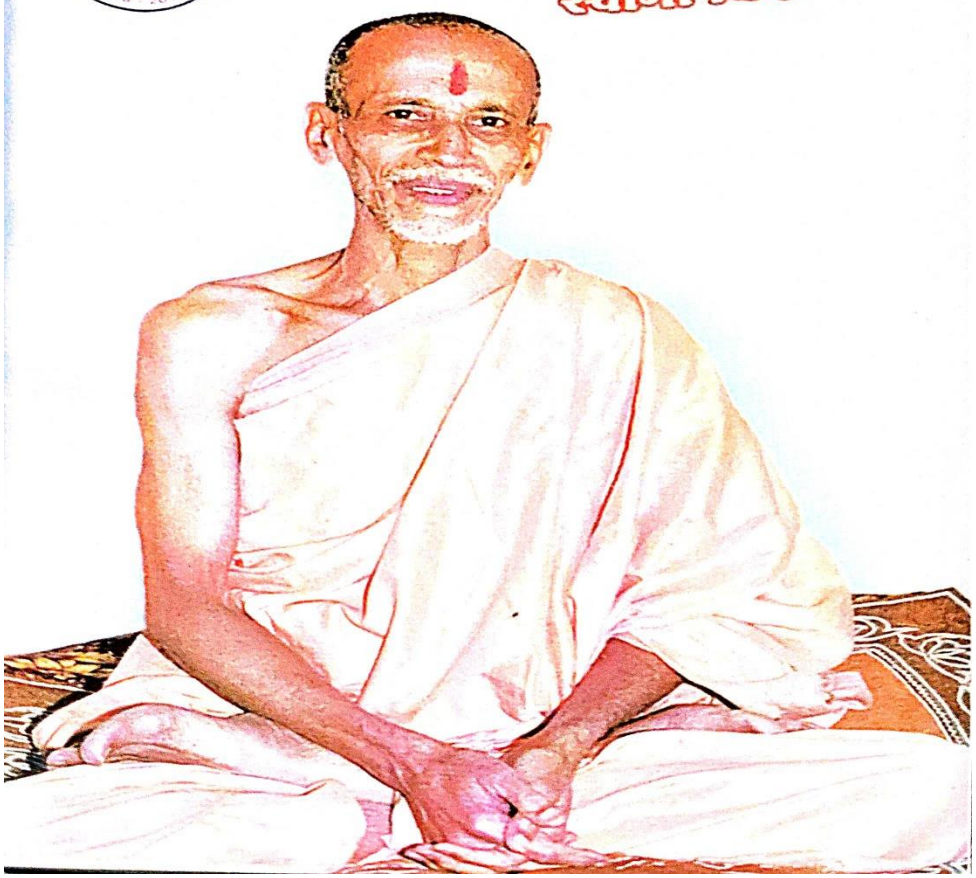

दैनिक जीवन में योग

श्री स्वामी चिदानन्द

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगर- २४९१९२

जिला : टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम संस्करण : : २०१६

(५,००० प्रतियाँ)

© द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

Swami Chidananda Birth Centenary Series-79

निःशुल्क वितरणार्थ

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए

स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त

फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर- २४९१९२,

जिला टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुद्रित ।

For online orders and Catalogue visit: dlsbooks.org

प्रकाशकीय

परम आराधनीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की जन्मशती के पुनीत अवसर की निर्दिष्ट शुभतिथि २४ सितम्बर २०१६ है। इस मंगलमय महोत्सव को मनाने हेतु मुख्यालय शिवानन्द आश्रम की सुनिश्चित योजना अनुसार परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के प्रबोधक प्रवचनों से समाविष्ट एक सौ पुस्तिकाओं का प्रकाशन निःशुल्क वितरणार्थ किया जा रहा है।

विश्ववंद्य सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के दिव्य जीवन-सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसारार्थ परम पूजनीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज व्यापक रूप से देश-विदेश में आध्यात्मिक यात्रा करते हुए असंख्य जिज्ञासुओं, भगवद्भक्तों को अपने स्वतःस्फुरित सहज, अतीव गहन प्रेरक प्रवचनों द्वारा दिव्य जीवन का पथ निर्देशित करते रहे। सद्गुरुदेव की दिव्यानुभूति के अनुसार स्वामी चिदानन्द जी के प्रवचन एक सन्त-हृदय के सहजानुभूत अन्तर्ज्ञानयुक्त प्रकटित भावोद्गार हैं।

अब तक के कुछ अप्रकाशित व्याख्यानों को पुस्तिका रूप में प्रकाशित कर श्री स्वामी जी महाराज को जन्म शताब्दी के महान् शुभावसर पर उनके पावन श्रीचरणों में सादर सप्रीत भेंट समर्पित करते हुए हम हर्ष का अनुभव कर रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तिका 'दैनिक जीवन में योग' साधना शिविर, दिव्य जीवन संघ, जयपुर शाखा तथा केन्द्रपाड़ा, ओडिशा मे दिये गये ५ प्रवचनों का संकलन है।

श्रीमती सुनीता सिंह, श्रीमती नीना सूरी एवं मुख्यालय शिवानन्द आश्रम के अंतेवासियों द्वारा इन प्रवचनों के अभिलेखन, सम्पादन तथा संकलन कार्यों में प्रेम पूर्ण सेवा-सहयोग के लिये हम हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

परम पिता परमात्मा, हमारे आराध्य श्री सद्गुरु भगवान् श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज और परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के अनन्त शुभाशीर्वाद सब पर रहें!

-द डिवाइन लाइफ सोसायटी

विषय-सूची

प्रकाशकीय 3

१.दैनिक जीवन में योग की आवश्यकता..... 5

२.आध्यात्मिक जीवन का आधार और उसकी दिशा..... 8

३.भगवन्नाम स्मरण 13

४.विद्यार्थियों के लिए आदर्श जीवन..... 18

५.अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानें..... 24

१.दैनिक जीवन में योग की आवश्यकता

('दिव्य जीवन संघ, जयपुर शाखा में दिया गया प्रवचन)

उज्ज्वल अमर आत्मन् ! दैनिक जीवन में योग की आवश्यकता इस विषय के ऊपर एक विशेष दृष्टिकोण, एक विशेष झाँकी आपके सामने, सेवा के रूप में रखने की चेष्टा करूँगा। दैनिक जीवन में योग की आवश्यकता, इसके ऊपर शास्त्रकार क्या कहते हैं, बड़े अवतार पुरुष क्या कहते हैं, सिद्ध महापुरुष संत क्या कहते हैं, इसके ऊपर विचार करें। योग की कई परिभाषाएँ हैं। इस सम्बंध में, गीता में हमें योग के विषय में कुछ सामान्य परिभाषाएँ मिला करती हैं, वो परिभाषित करने के उद्देश्य से दी हुई नहीं हैं, ऐसे ही किसी किसी प्रसंग में उपदेश देते देते कुछ परिभाषाएं आयी हैं, उनमें एक बहुत महत्त्वपूर्ण यह है 'तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्' ऐसा एक जगह में जगदुरु साक्षात् अवतार पुरुष भगवान् कृष्ण चन्द्र कहते हैं, उसको योग जानो जो कि तुम्हारे दुःख के साथ जुड़ी हुई यह जो अभी वर्तमान अवस्था है, उसे हमेशा के लिए विदाई दे देना ताकि पुनः दुःख के साथ संयोग न हो। यदि दुःख के साथ संयोग नहीं है तो क्या होता है? तो आदमी को सुख प्राप्त हो जाता है, दुःख के अभाव में सुख। तो योग वो अवस्था है, जिस अवस्था में मानो दुःख के साथ अपना नाता तोड़ दिया है, नाते को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया है, छोड़ दिया है। जिन्होंने योग को अपना लिया है, उनके लिए दुःख नहीं है, तो इससे बढ़ कर क्या चाहिए? हर मानव इसके लिए कोशिश करता है कि अपने लिए दुःख नहीं हो, अपने लिए किसी प्रकार का कष्ट नहीं हो, संकट नहीं हो। मुक्ति के लिए भी इसीलिए प्रायः प्रयत्न करता है, क्योंकि यह संसार तापत्रय से पीड़ित है। इस तापत्रय से हमें ऊपर उठ कर हमेशा के लिए आजाद बन जाना चाहिए, इसके फंदे में, इसके पाश में, इसके जाल में तापत्रय के, आधि-दैविक, आधि-भौतिक आध्यात्मिक जाल में हाय हाय नहीं करना चाहिए, शान्ति और आनन्द प्राप्त कर लेना चाहिए। मोक्ष की भी एक परिभाषा में एक अंग यह है, सर्व दुःख निवृत्ति और योगावस्था में भी दुःख का अत्यधिक अभाव हो जाता है, क्योंकि योग एक ऐसे तत्त्व के साथ सम्बंध बना देने की प्रक्रिया है जो कि केवल आनन्द स्वरूप है, आनन्दमय है। ब्रह्म की परिभाषा करते हुए अनुभव प्राप्त किये हुए योगियों ने ब्रह्म को ऐसा बताया है कि आनन्द ही ब्रह्म है, ब्रह्म का स्वरूप केवल 'परिपूर्ण आनन्द स्वरूप' है। इसलिए जब योग के द्वारा हम ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त कर लेते हैं, उस परिपूर्ण आनन्दमय तत्त्व के साथ नित्य सम्बंध हम जोड़ देते हैं, आनन्द के साथ जब सम्बंध जुड़ गया तो वहाँ पर दुःख की तो बिल्कुल सम्भावना है ही नहीं। वातानुकूलित कमरे के अन्दर चले गये तो फिर गर्मी कैसे आएगी? वहाँ तो गर्मी नहीं आ सकती है। तो योग की आवश्यकता इसीलिए है। हम जिस चीज के वास्ते, जिस एक अनुभव के वास्ते तरस रहे हैं, और जन्म से ही हम जिसके पीछे उसकी खोज में पड़े हुए हैं, उसके वास्ते हम प्रयत्न करते हैं, कई तरीके से हम प्रयत्न करते हैं, दुःख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति, वो तत्क्षण योग से परिपूर्ण रूप में आ जाती है। इसीलिए योग की आवश्यकता है।

और बिना योग के मानव के जीवन में क्या विषमता आ जाती है, उसके बारे में थोड़ा विचार कर लो, सोच लो। एक नल से हजारों आदमी पानी ले जाते हैं कोई सार्वजनिक नल हो, लोग अपना-अपना बर्तन लाकर के-क्या

बाल्टी है, क्या घड़ा है, कितने ही बर्तनों में, कितना पानी ले जाते हैं, नल खोलते ही एक दम पूरे जोर से पानी आता है, तो उसका क्या अर्थ है? और कभी-कभी पानी बन्द हो जाता है। प्रातः काल तो पानी आता है। नल खोला तो ९ बजे के बाद फिर पानी नहीं आता है, फिर शाम तक नहीं आता है। संध्याकाल को एक आध घंटा आता है फिर बंद हो जाता है। तो उससे हमें कुछ सीखना है, वो यह कि नल जब खोलते हैं, तो जब तक उसका सम्बंध किसी एक टंकी तक बना हुआ है, वहाँ से पानी आता है, यदि वो सम्बंध कट गया, पानी बंद हो गया, फिर यह नल सूखा रहेगा। इसी प्रकार हमारा जीवन ऐसा ही हो जाएगा, यदि हम आनन्दमय और शान्तिमय तत्त्व के साथ अन्दर से हमेशा यह सम्बंध बनाए रखते हैं, तब हमारे जीवन में शान्ति, एक समरसता, आनन्द यह सब बना रहता है और हम एक दम बहुत अधिक इस प्रपंच के साथ अपना नाता जोड़कर के उसको भूल जाएँ, उस तत्त्व को भूल जाएँ, उस के साथ अपने आन्तरिक सम्बंध को हम छोड़ दें, तब हमारा जीवन रूखा-सूखा हो जाता है, नीरस बन जाता है, हमारे जीवन में कोई सौन्दर्य नहीं रह जाता है, क्योंकि यह प्रपंच तो, दुःख का सागर है, इसमें सुख की हम आशा करें, प्रतीक्षा करें यह हमारी भूल है। प्रपंच की कोई भूल नहीं है, संसार की भूल नहीं है, संसार का कहीं बोर्ड नहीं लगा है कि, मेरे पास आये, तो तुम को खूब सुख शान्ति मिलेगी, संसार ने ऐसा घोषित नहीं किया है, बल्कि भगवान् ने संसार बना कर के बोर्ड लगा दिया 'अनित्यं असुखं दुःखालयं अशाश्वतम्' ऐसा एक बोर्ड लगा दिया है। हमने बोर्ड को नहीं देखा, भगवान् कहते हैं, मुझे खेद है कि मैंने आपके लिए चेतावनी लगा दी है, यहां पर अल्प समय के लिए थोड़ी सी ही प्राप्त करने की वस्तु है। अल्प वस्तु को भले ही तुम काम में ले आओ, लेकिन इस से सुख और आनन्द की आशा और प्रतीक्षा मत करो, धोखा खाओगे। प्रपंच की अल्प वस्तु कुछ न कुछ काम देती है, उतने तक ही उसका उपयोग सीमित है, लेकिन इससे हमें प्रसन्नता नहीं मिल सकती। जड़ वस्तु से एक सजीव अनुभूति हम प्राप्त नहीं कर सकते हैं, क्योंकि यह जो सुख है, आनन्द है, यह तो अपने आप अन्दर से आने वाली एक अनुभूति है, एक अनुभव है, सजीव अनुभव है, यह जड़ वस्तु से नहीं आ सकता। तो इस की प्रतीक्षा नहीं करना, इससे काम लेना लेकिन इसके हाथ में गुलाम नहीं बनना। यही हमारे सुख का स्रोत है, हमें सुख देगा ऐसा सोच करके हम इसके पीछे पड़ जाएँ, तो फिर रोएँगे।

भगवान् पुनः पुनः कहते हैं इन्द्रिय और उसके जो विषय हैं, उसके सम्पर्क से जो कुछ अनुभव में आता है, उसका विश्लेषण करें तो उससे कोई सुख प्राप्ति नहीं होती है, जैसे यह चक्षु है, इसके विषय रंग-रूप है, आकृति है। कान है, उसका विषय शब्द का श्रवण है, तो इस सम्पर्क से, इन्द्रिय और उसके विषय वस्तु के सम्पर्क से जो अनुभव में आता है उसके लिए कहा, 'ये हि संस्पर्शजा भोगा।' यह भोग का स्वरूप क्या है? असली स्वरूप क्या है? 'दुःख योनय एव ते' यह दुःख का स्रोत है, इससे दुःख ही उत्पन्न होता है, अन्त में जाकर के यह दुःख ही देता है, इसमें सुख नहीं है। थोड़ा सा शुरुआत में सुख सा प्रतीत होता है, लेकिन अन्त में वो दुःख के रूप में प्रकट होता है। ऐसा सुख, सुख नहीं है। जो पहले थोड़ा सा मीठा लगे, उसके बाद कड़वा बन जाए, इसको हम सुख नहीं कहते हैं। इसलिए यह स्पष्ट भगवान् ने कहा है यह दुःख योनि है, दुःख का स्रोत है, इसमें सुख की प्राप्ति हो नहीं सकती है। इसलिए सचेत रहो, अन्दर से उस चीज के साथ, उस वस्तु के साथ, उस तत्त्व के साथ सम्बंध बना कर रखो जो कि आनन्द देने वाला है। नहीं तो तुम्हारा जीवन बिल्कुल सूखा हो जाएगा। बिल्कुल गिस्तान जैसा यह संसार है। जब तक इन लट्टुओं का पावर हाऊस के साथ सम्पर्क जुड़ा हुआ है तब तक एक दम इससे प्रकाश आता है और यदि

किसी वजह से यहाँ के इन लट्टुओं के साथ सम्पर्क टूट जाए तो यह लट्टू नो पूरा वैसा ही है, लेकिन अन्धेरा रहेगा, यह प्रकाश नहीं दे सकता है। इस संसार में ऐसी ही मानव की, इस जीवात्मा की हालत है। यदि संसार के साथ सम्बंध बना के रखें, इस नश्वर तत्त्व जो अल्प है, जो देश काल से सीमित है, अपूर्ण है, परिवर्तनशील है अशाश्वत, अनित्य है, इन तत्त्वों के ाथ ही हम अपना सम्बंध यहाँ पर जोड़े रखें, तब हमारा यह जीवन जो है बल्कुल शुष्क, भगवान् के साथ सम्बंध न रखने के कारण बिल्कुल सूखा, रस और निःसार हो जाएगा। इसलिए आवश्यक है कि यद्यपि हम इस पंच के साथ का सम्बंध बिल्कुल पूरा का पूरा छोड़ नहीं सकते हैं, जबूरन हमें इसके साथ सम्पर्क रखना ही होगा, तो भी यह सम्पर्क रखते रखते साथ में अन्दर के उस सम्बंध की उपेक्षा नहीं करना, उसको भी बढ़ाते जाओ, तब तो अशान्ति के बीच में भी तुम्हें शान्ति का अनुभव हो सकता है। दुःख, शोक, संकट के बीच में भी तुमको साथ-साथ आन्तरिक एकान्त बना रहेगा।

आन्तरिक आनन्द बना रहेगा, अन्धकार के बीच में तुमको आन्तरिक प्रकाश मिलता रहेगा। इस बेसुरे संसार के काले मुख के दर्शन करते करते अन्दर से सुन्दरता का अनुभव हम करते रह सकते हैं। एक ही समय में एक ही साथ, भगवान् की आन्तरिक सन्निधि जो है, वो भी बनी रहती है, तो इसलिए यह और भी अधिक आवश्यक है, गर्म हवा में बैठे हुए हम जैसे पंखे को रखते हैं, उसी तरह जब तक हम संसार में हैं, तब तक यह करना अनिवार्य है। जमीन के बीच में अपनी जड़ों को भेजकर के वृक्ष अन्दर आहार के रूप में पानी के स्रोत के साथ एक सम्बंध जोड़ के रखता है, इसलिए वह हरा-भरा रहता है, फलता-फूलता है, एक दम फैलता है, वृक्ष की इस सजीवता का क्या रहस्य है? उसने अन्दर एक सम्बंध रखा है, देखते तो नहीं हैं, क्योंकि जमीन के बीच है, अन्दर है, नीचे गड़ा हुआ है, दृष्टि से अगोचर है, फिर भी वृक्ष की विशालता का, उसकी हरियाली का, उसके विकास का यही रहस्य है कि उसने अन्दर एक आहार के स्रोत के साथ सम्बंध बना रखा है। हमारा भी ऐसा ही है, जब तक उस सच्चिदानन्द तत्त्व के साथ हम इस प्रकार के आन्तरिक एक गुप्त, एक अदृश्य, सूक्ष्म अति सूक्ष्म आत्मीय सम्बंध बना के रखेंगे, तब तक हमारे जीवन में सब कुछ अच्छा रहेगा, हम उस दिव्य तत्त्व का समस्त सौंदर्य अपने में संजोये रखेंगे। उनके साथ सम्बंध रखना हमारे लिए सबसे सहज चीज है, क्योंकि उसी से हम आए हुए हैं, वो हमारा उत्पत्ति स्थान है, वो हमारा असली वतन है, हमारा निज धाम है। हमारा नित्य निवास स्थान वो ही है। यहां तो केवल मात्र हम यात्री हैं, केवल मात्र हम मुसाफिर हैं, दो दिन के राही और पथिक, चल के दिन गुजार के चले जाना है। इसलिए जो हमारा है, जहां से हम आए हैं, जो अभी भी अदृश्य हमारा आधार है। उसी के आधार पर हम रह रहे हैं, जीते हैं, और अंत में जो हमारे जीवन की सफलता है उसके साथ सम्बंध बनाए रखना अत्यन्त आवश्यक है। इसी में हमारा कल्याण है, इसी में हमारे आनन्द और शान्ति की गारंटी है, इसी में हमारे जीवन की सफलता है। इसलिए कीर्तन में कहा है-

जिस हाल में जिस देश में जिस वेश में रहो
राधा रमण राधा रमण राधा रमण कहो।

हरि ॐ तत्सत् ! श्री परमात्मने नमः !

२.आध्यात्मिक जीवन का आधार और उसकी दिशा

(साधना शिविर, दिव्य जीवन संघ, जयपुर शाखा में दिया गया प्रवचन)

उज्ज्वल आत्मस्वरूप, भगवत् प्रेमी, सत्संगी साधक वृन्द !

हमारा राष्ट्र एक देवता है। भारतवर्ष केवलमात्र भूगोल में एक खंड नहीं है। केवलमात्र पूरी पृथ्वी पर एक स्थान नहीं है। अपितु हमारा पुनीत राष्ट्र एक शक्ति है, एक देवता है। यह जो गूढ़ तथ्य है, इसको जिन्होंने अनुभव किया है, उन्होंने इस बात को प्रकट किया है। और जिन्होंने इसको अनुभव किया है वो साधारण व्यक्ति नहीं थे, बहुत ऊँचे, पहुँचे हुए व्यक्ति थे। ऐसे व्यक्तियों ने इस रहस्य को अनुभव करके, उसके बाद इस को घोषित किया है।

दक्षिण भारत के मद्रास प्रान्त में जन्म लेने वाले एक श्रेष्ठ कवि, जिन्होंने सरस्वती के परिपूर्ण अनुग्रह को प्राप्त किया था, वो जन्म से ही एक कवि थे। जिनकी इस साल में अखिल भारतीय स्तर पर शताब्दी मना रहे हैं। हो सकता है उसकी स्मारिका भी निकली होगी- सुब्रमन्य भारती नाम के प्रख्यात कवि थे वह। उन्होंने भी भारतवर्ष को केवलमात्र एक देश या राष्ट्र या खण्ड ऐसा नहीं देखते हुए, नहीं समझते हुए, यही कहा कि यह तो साक्षात् एक दिव्य शक्ति है। यह देश और इस देश की प्रजा का, इस देश की संस्कृति और धर्म के द्वारा जिसका प्राकट्य है, ऐसे भारतवर्ष को उन्होंने पूजनीय, आराधनीय एवं एक दिव्य शक्ति कहा है। और बंकिमचन्द्र चटर्जी,

एक प्रसिद्ध बंगाली लेखक ने भी इस प्रकार के दृष्टिकोण को अपनाया था। ये क्यों, इसका कारण ये है कि भारतवर्ष के जो सिद्धान्त हैं, भारतवर्ष के जो धर्म हैं, यह कोई बुद्धिजीवी या उनके विचार द्वारा बनाये हुए सिद्धांत नहीं हैं। लेकिन जो परात्पर तत्त्व, जो नित्य तत्त्व है, उसका जिन्होंने साक्षात्कार किया था, जिसका अनुभव किया था, ऐसा अनुभव यानि उनकी उस अनुभूति के आधार पर बनाया हुआ सिद्धांत और धर्म है। उपनिषद् में जो कुछ बताया गया है, वो उनके अनुभव का प्राकट्य है मस्तिष्क के विचार नहीं हैं, बुद्धि के विचार नहीं हैं। लेकिन बुद्धि से परे, अपरोक्ष अनुभूति के द्वारा जिन्होंने जिस-जिस तत्त्वों को अनुभव किया, उस अनुभव को उन्होंने उपनिषदों में रखा। हमेशा के लिए, दुनिया के कल्याण के लिए हमेशा के लिए रखा। तो ऐसा अनुभूति के आधार पर बनाया हुआ हमारा दर्शन शास्त्र, हमारे सिद्धांत और हमारे धर्म, इन सिद्धांतों के ऊपर ही हमारा धर्म है। और यह जो अपरोक्ष अनुभूति के आधार पर रखा हुआ सिद्धांत है, इसमें दो अनोखी चीजें हैं, जो कि भारतवर्ष की देन हैं तमाम दुनिया के लिए। और यह जो तत्त्व है, यह मानव के जीवन में एक विलक्षण परिवर्तन और रूपान्तर ले आने की शक्ति रखने वाले सिद्धांत हैं।

यह तत्त्व मानव को मानवता से परे ले जाते हुए, उसको दिव्य बनाने की शक्ति रखने वाले सिद्धान्त हैं। दो तत्त्व हैं- एक तो जगत् को उन्होंने साक्षात् ब्रह्म स्वरूप जाना और साक्षात् देखा। और दूसरा है- मानव का जो आंतरिक, वास्तविक निज स्वरूप है, उन्होंने कहा, घोषित किया, यह तो एक अविनाशी, शाश्वत, नित्य, अमर आत्म स्वरूप है, जो कि परमात्मा का एक अंश है, और परमात्मा से अभिन्न है।

आपकी दिव्यता और जगत् की दिव्यता, यह अनुभूति उन्होंने करके, इस अनुभूति के आधार पर बनाया हुआ एक विलक्षण सिद्धान्त हमें दिया। वेदान्त का यह दर्शन, **'सर्वं विष्णुमयं जगत्, सर्वं खल्विदं ब्रह्म'** हमारे भारतवर्ष का यह दर्शन, मानव की दिव्यता और समस्त जगत् की दिव्यता का अद्वितीय दर्शन है।

ऐसा गोस्वामी जी ने कहा था, **'सियाराममय सब जगत जानी करूँ प्रणाम जोरी जुग पाणी।'** 'सियाराममय' यह भक्त ने भी देखा, वेदान्ती ने भी देखा। इन दोनों का एक ही दृष्टिकोण था, वेदान्ती का और भक्तों का यही अनुभव है कि जगत् जो है यह साक्षात् भगवन्मय अर्थात् भगवान् से ओत-प्रोत है। और मानव अपने आन्तरिक स्वरूप में दिव्य, अविनाशी, अमर, अजर-अमर, अनादि, अनन्त नाम रूप से परे, देशकाल से परे है, अस्त्र-शस्त्र उसे घायल नहीं कर सकता है, अग्नि उसे दहन नहीं कर सकती है, जला नहीं सकती है, पानी उसे भिगो नहीं सकता है और हवा उसे सुखा नहीं सकती है।

ऐसे हम हैं- **'अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।'** तो, इस सिद्धांत पर उन्होंने हमें अपना जीवन जीने की कला बतायी। जीवन क्या होना चाहिए, कैसा होना चाहिए, क्यों होना चाहिए? उन्होंने कहा कि जीवन के द्वारा तो अपने आप को पहचानना चाहिए। यह जीवन का परम लक्ष्य है, जीवन का सबसे ऊँचा उद्देश्य है। अपने आप को, अपनी दिव्यता को जान करके निर्भय बन जाना। मैं तो अमर हूँ, मुझे कोई क्या कर सकता है, कुछ भी नहीं, कुछ बिगाड़ नहीं सकता है। इसलिए निर्भयता, निर्भय और स्वतन्त्र अवस्था, कैवल्य साम्राज्य, किसी के ऊपर हम आश्रित नहीं हैं, परतन्त्र नहीं हैं, हम स्वतन्त्र हैं, हम निर्भय हैं, क्योंकि हम अमर हैं।

इस अनुभूति को प्राप्त करना हमारा परम लक्ष्य है। और इस लक्ष्य की प्राप्ति किस प्रकार से होगी? इस लक्ष्य प्राप्ति के लिए क्या हम हमारा घर-बार छोड़ करके, कहीं जाकर के एकान्त में, पर्वत के चोटी में या घनघोर जंगल की गुहा में, कहीं रेगिस्तान में जाकर के बैठना होगा? ऐसा कई योगी पुरुषों ने किया है। लेकिन हमारा सिद्धान्त कहता है, यह हरेक व्यक्ति का जन्म सिद्ध हक है, हरेक प्राणी ने इसको प्राप्त करना है। यह नहीं कि यह अति अल्प संख्यक लोगों के लिये रखा है। इसमें विशिष्ट या अति विशिष्ट की कोई प्रणाली नहीं है, हर आदमी का हक है, वह कोई भी हो। चारों वर्णों के लिए, चारों आश्रमों के लिए, स्त्री के लिए, पुरुष के लिए सबके लिए यह प्राप्ति जो है, खुली है। किसी के लिए कोई मनाही नहीं है, सबके लिए यह प्राप्य है, साध्य है। इसलिए जब सबके लिए प्राप्य है, तो इसका क्या उपाय है?

उन्होंने कहा, उपाय केवलमात्र एक है- जहाँ पर भी तुम हो, जहाँ पर भी तुम्हारा जीवन है, तुम गृहस्थ हो, वानप्रस्थ हो, संन्यासी हो, ब्रह्मचारी हो, विद्यार्थी हो, छोटे हो, बड़े हो, किसी औद्योगिक क्षेत्र में तुम्हारा कार्य हो, लेकिन उसमें रहस्य एक ही है, अपने जीवन में जैसा-जैसा तुमने रहना है, वैसे रहते रहो, जैसा-जैसा तुमने कार्य करना है करते रहो, लेकिन धर्म को मत छोड़ो। धर्म के आधार पर तुम्हारा जीवन बने और इस जीवन में थोड़ा-बहुत भजन भी होता रहे। लेकिन धार्मिक जीवन ही इस परम लक्ष्य प्राप्ति की साधना है। धार्मिक जीवन ही इसके लिए रास्ता है। धार्मिक जीवन के द्वारा हम साक्षात्कार को प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि धार्मिक जीवन के क्षेत्र में जो कुछ थोड़ी सी भी साधना हम करते हैं तो उसकी जो सफलता है, उसकी जो शक्ति है, वह अत्यंत सक्षम होती है। धार्मिक जीवन में एक क्षमता है। एक माला जो एक धार्मिक, धर्मनिष्ठ, व्यक्ति करता है, और धर्म में जो ढीला आदमी है, वह एक हज़ार माला जप करे तो उससे भी अधिक तुरन्त फल देने वाली शक्ति उसकी एक माला जप में है जिसका जीवन धर्म पर आधारित है। इसलिए हमारे पूर्वजों ने चार प्रकार के तत्त्व लेकर के कहा कि हरेक मानव को, यह चार जो मूल्यताएँ हैं, इनके वास्ते प्रयत्न करना है, इनके वास्ते पुरुषार्थ करना है, इनके वास्ते प्रयास करना है। वो चार तत्त्व हम जानते हैं कि इनको कहते हैं, पुरुषार्थ चतुष्टय। चार पुरुषार्थ - प्रथम पुरुषार्थ तो हमने बता दिया, आपका परम लक्ष्य है आत्म-साक्षात्कार, अपनी दिव्यता को पहचान करके स्वतन्त्र हो जाना, हमेशा के लिये इस प्रपंच के दुःख संकट से मुक्त हो जाना, स्वतन्त्र बन जाना, निर्भय बन जाना, शान्ति और आनन्द का सदा के लिए अनुभव प्राप्त कर लेना। यह तो परम पुरुषार्थ है, मोक्ष कहते हैं इसको।

साक्षात्कार कहो, आत्मिक ज्ञान कहो, मोक्ष या कैवल्य कहो। लेकिन इस पुरुषार्थ की प्राप्ति तभी हो सकती है जब हमारे जीवन में धर्म ही आधारशिला बन जाता है, धर्म ही बुनियाद बन जाता है। धर्म की बुनियाद के ऊपर हमारा जीवन बनेगा, तो उसकी पराकाष्ठा पर पहुँच जाने से, अपने आप मोक्ष हो जायेगा।

धर्म-रहित जीवन तो मानो रेगिस्तान में मृग-मरिचिका है, उसका पानी पी करके प्यास नहीं बुझ सकती है, बालू को हम निचोड़ कर के उसमें से घी निकाल सकते हैं, और पानी को बिलो कर के उसमें से मक्खन हम निकाल सकते हैं। और रेगिस्तान की मृग-मरिचिका का जल पी कर हम प्यास बुझा सकते हैं। और खरगोश के सींग के ऊपर एक बड़ा शोधग्रन्थ लिख कर के हम पी-एच.डी. की उपाधि ग्रहण कर सकते हैं। लेकिन बिना धर्म के,

बिना हरि भजन के हम उस ऊँचे लक्ष्य को प्राप्त कर लें, यह कदापि नहीं हो सकता है। इसलिए धर्म को उन्होंने सबसे प्रथम स्थान दिया। पुरुषार्थ चतुष्टय को जो हमारे सामने रखा तो उसको ऐसे एक क्रम में रखा - धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। यह अर्थ और प्रपंच के संबंधित पुरुषार्थ हैं। अर्थ से तात्पर्य है पैसा कमाना, नहीं तो हमारा जीवन यहाँ पर नहीं हो सकता है। काम का अर्थ है, हमारे मन की कई इच्छाएँ, कामनाएँ रहती हैं तो उनको पूरा करना। लेकिन यह मनोकामनाओं को पूरा करने में हमारे लक्ष्य की प्राप्ति में कोई बाधा तब नहीं होगी, जब हमारे मन की कामना, धर्म के अनुकूल है, धर्म के विरोध में नहीं है, धर्म के अनुसार है। धार्मिक कामनाओं को पूरा करने में कोई आपत्ति नहीं है। हमारे शास्त्रकारों ने, हमारी श्रुतियों ने कभी उस पर कोई आपत्ति नहीं की है। अगर धार्मिक कामनाएँ हैं, तो पूरा करने के लिए बेशक तुम कोशिश कर सकते हो, उसमें कोई बाधा नहीं है। पर धर्म के विरुद्ध कामनाएँ हो जाएं, तो उन्हें तुरन्त त्याग देना चाहिए। उनको मन में एक सेकेन्ड भी टिकने के लिए हमें जगह नहीं देनी चाहिए, स्थान नहीं देना चाहिए। हमारे मन में हर समय यही विचार होना चाहिए कि जो कुछ कामनाएँ उठती हैं, जो कुछ मन में ख्याल आता है, जो कुछ संकल्प उठता है, यह क्या धर्म के अनुसार है या धर्म के विरुद्ध है? यह प्रश्न पहले पूछना चाहिए। यदि यह धर्म के विपरीत है तो दूसरा उसके ऊपर विचार ही नहीं करना चाहिए। तुरन्त उसी क्षण उसे त्याग देना चाहिए। और धर्म के विरोध में नहीं है, धर्म के अनुकूल है तो दूसरा सवाल पूछना चाहिए कि क्या भगवत्प्राप्ति की मेरी जो साधना है, यह उसके लिए सहायक है या नहीं, आवश्यक है या नहीं? यदि नहीं है, तो बेकार है, इसे छोड़ दो। केवलमात्र ऐसी दो प्रकार के मनोकामनाओं को पूरा करना चाहिए- एक है हमारा कर्तव्य कर्म, उसके मार्ग में जो मनोकामना है वह ठीक है, जैसे एक आदमी है, परिवार वाला है, उसके वृद्ध माता-पिता हैं। वृद्ध माता-पिता की हमें सेवा करनी चाहिए। उनकी वृद्धावस्था में उन्हें आराम से रखना चाहिए। उसके लिए जो प्रबन्ध है वह करना चाहिए। ऐसी कोई कामना उठे गृहस्थ में, वह ठीक है। उसके वास्ते जो प्रबन्ध करना है, जो कदम उठाना है, वह कर सकता है। क्योंकि अपना कर्तव्य कर्म है उसके वास्ते जो कुछ मनोकामना उठती है तो वह ठीक है और वो भी धार्मिक रीति में करना चाहिए। उनके लिए छोटा-सा घर बनाना हो, वो ठीक पैसे से बनाना चाहिए, एक नम्बर के पैसे से उसको बनाना चाहिए। ऐसा हमारे कर्तव्य कर्म कभी भी करना हो ठीक ढंग से करना चाहिए।

हमारे वर्तमान युग में एक विलक्षण पुरुष ने इस बात पर इतना ज़ोर दिया है कि यदि हम उनका सिद्धान्त अपनायें तो हम एक कदम भी गलत नहीं उठा सकते हैं- यह हमारे बापू जी थे, हमारे महात्मा गांधी। उनका एक अटल सिद्धान्त रहा कि जो उद्देश्य है वह तो पवित्र होना ही चाहिए, लेकिन उद्देश्य मात्र पवित्र होना ही पर्याप्त नहीं है, उसके लिए साधन भी उतने ही पवित्र होने चाहिएँ। उतने ही पवित्र होने चाहिएँ, जितना उद्देश्य पवित्र है।

उद्देश्य पवित्र करके हम उल्टे-सीधे तरीके से उद्देश्य प्राप्त कर लें- कदापि नहीं। वो उद्देश्य प्राप्त करने के लिए जो हम तरीका पकड़ें, वो भी बिल्कुल शत-प्रतिशत धार्मिक होना चाहिए, पवित्र होना चाहिए, निर्मल होना चाहिए। ऐसा अटल उनका सिद्धान्त रहा। अंतिम सांस तक वे इस सिद्धान्त से कदापि थोड़ा भी नीचा नहीं उतरे। ऐसा महात्मा गांधी का सिद्धान्त था। यदि बहुत महत्त्वपूर्ण, अत्यंत पवित्र उद्देश्य प्राप्ति के वास्ते हमने

कोई गलत रास्ता अपनाया, उन्होंने कहा- नहीं, नहीं, नहीं। उस उद्देश्य की पवित्रता के कारण इसको हम कदापि ठीक नहीं साबित कर सकते हैं। ऐसा उनका सिद्धान्त है।

इसलिए धर्म मनुष्य का परम मित्र है, परम हितैषी है। जीवन भी चला जाये लेकिन धर्म को नहीं छोड़ना चाहिए। ऐसा भारतवर्ष की यह संस्कृति है। हमारी संस्कृति का यही आदर्श है। तो धर्म के आधार पर, धर्म को हमारे जीवन की बुनियाद, आधारशिला बना कर मोक्ष की प्राप्ति के वास्ते चेष्टा यदि हम करें, तो हमारा जो प्रपंच का व्यावहारिक जीवन है, वह अपने आप ठीक हो जायेगा। दिशा उसकी होनी चाहिए मोक्ष के प्रति और आधार होना चाहिए धर्म। धर्म के आधार पर और मोक्ष की दिशा में जाते हुए यदि हमारा समस्त व्यवहार इन दो चीज़ों से निर्देशित और प्रशासित होगा, तो यह कभी हमें दुःख-कष्टों की ओर ले जाने वाला नहीं होगा और यह हमें यश की ओर ही ले कर जाएगा, अपयश की ओर नहीं। इस पर आप विचार करें। पुरुषार्थ चतुष्टय में दो पुरुषार्थ द्वितीय और तृतीय, प्रपंच के सम्बंधित पुरुषार्थ, कमाई और मन की कामनाओं की पूर्ति किस तरह होना चाहिए, इसे ठीक-ठीक समझाने के लिए उन्होंने हमें दो पुरुषार्थ दिए-

एक उत्तमोत्तम पुरुषार्थ, अध्यात्म मूल्यता और एक अनिवार्य पुरुषार्थ, धर्म की मूल्यता। धर्म के आधार पर हमारा व्यवहार हो और हमारा समस्त व्यवहार मोक्ष की दिशा की ओर जाने वाला हो। जब ऐसा व्यवहार हम अपनाएँगे तो हमारे लिए अहित या अकल्याण कदापि नहीं हो सकता है। इस व्यवहार के द्वारा इहलोक और परलोक, दोनों ही को सुखमय रीति से हम साध सकते हैं। तो ऐसा ज्ञानी पुरुषों ने हमारे लिए रास्ता बताया है। तो इन बातों को आपके सामने रखके अपनी इस सेवा को समाप्त करता हूँ, धन्यवाद, आप सब का कल्याण हो!

ॐ तत् सत् !

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
र्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः !

३.भगवन्नाम स्मरण

(साधना शिविर, दिव्य जीवन संघ, जयपुर शाखा में दिया गया प्रवचन)

दिव्य अमर आत्म स्वरूप ! अनित्य, अशाश्वत, दुःख-शोक, चिन्ताओं और कठिनाइयों से भरे इस संसार में, सुखपूर्वक, आनन्दमय एवं सफल जीवन जीने के लिए, हमें अपने शाश्वत सुख-स्रोत से सतत सम्बंध बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। भगवान् के साथ सम्बंध जोड़ कर रखने के बहुत से साधन हैं, उनमें से सबसे अधिक सरल और प्रभावशाली साधन नाम-स्मरण है। नाम जप का महत्त्व अनिर्वचनीय है। अजामिल ने अपनी मृत्यु शैय्या से यमदूतों को भगा दिया, नाम के बल पर भगा दिया, अजामिल ने नहीं भगाया, जब यमदूत आए तब उस समय अजामिल तो बिल्कुल असहाय था, उसने नाम के बल पर भगा दिया, और नाम के बल से ही पाँचों तत्त्वों के ऊपर प्रह्लाद ने अधिकार कर लिया, अग्नि उसको जला नहीं सकी, पानी उसको डुबो नहीं सका, और भी बहुत कुछ किया, पर्वत के ऊपर से उसको नीचे पटक फेंका, लेकिन पर्वत भी उसके शरीर के ऊपर कुछ कर नहीं सका, ऐसे हर प्रकार से प्रयत्न किया। दुष्ट हिरण्यकश्यप ने प्रह्लाद को मारने के लिए अनेक चेष्टाएँ कीं, लेकिन नाम के आधार पर वह सबसे बच के, जीत के आ गया, इसी प्रकार से आज कल के, चार पाँच शताब्दियों में जितने भी बड़े संत महापुरुष हुए हैं, उनके जीवन में जो कुछ उन्होंने प्राप्त किया है, जो कुछ सिद्धियों को उन्होंने अपनाया है, वो सब नाम के प्रताप से, नाम के बल से। छत्रपति शिवाजी महाराज के जो गुरु थे, वे बड़े विरक्त बाबा थे, समर्थ रामदास उनका नाम था, उन्होंने संन्यास धारण कर लिया था, भगवाँ पहनते थे, उन्होंने राम नाम की सिद्धि प्राप्त कर ली थी। राम नाम का जप और स्मरण करके उन्होंने सब कुछ प्राप्त कर लिया तथा समर्थ सदुरु बन गये और छत्रपति शिवाजी को अपनी शक्ति प्रदान की जिसके बल से उन्होंने धर्म की रक्षा की, केवल मात्र नाम के बल से। उसी नाम के एक संत हमारी अभी इसी पीढ़ी में हुए थे, उनका भी सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के महासमाधि के पश्चात् उसके ११वें दिन शरीर शान्त हो गया था। उनका नाम भी स्वामी रामदास था। ये दक्षिण भारत के केरल और कर्नाटक के पास के थे। उनका जीवन भी अद्भुत जीवन था और केवल मात्र विचित्र नाम की लीला, नाम की शक्ति, नाम के प्रभाव से उनका पूरा जीवन एक जीवन्त दृष्टांत था। उनकी कोई और साधना नहीं रही, बस केवल यह नाम का जप, राम नाम का ही जप था, और उसी के द्वारा उन्होंने सब से ऊँचा आनन्द प्राप्त किया, ब्रह्मानन्द के अनुभव तक पहुंच गये, जीवन्मुक्त बन गये केवल मात्र नाम के आधार से! बड़े सिद्ध महापुरुष थे। उत्तर कर्नाटक में हुबली में सिद्धारूढ़ स्वामी करके एक बड़े योगी थे, उनके सामने एक

शेर भी बिल्ली की तरह बैठ जाया करता था। ऐसा उनका प्रभाव था। हिंसात्मक जन्तु-जीवन के ऊपर भी उनका अधिकार और प्रभाव था। केवल मात्र शिव नाम 'शिवाय नमः ॐ शिवाय नमः शिवाय नमः ॐ नमः शिवाय, शिवाय नमः ॐ शिवाय नमः शिवाय नमः ॐ नमः शिवाय' उन्होंने लाखों आदमियों को इस नाम का उपदेश दिया। आस-पास के गाँवों वाले सब किसान सब मज़दूर सबके मुख में यही नाम रहता था। उन्होंने लाखों आदमियों को इस नाम की दीक्षा देकर के नाममय बना दिया। पूरे के पूरे हुबली क्षेत्र के पास वे सिद्धारूढ़ स्वामी एक बड़े तपस्वी योगी सिद्ध महापुरुष माने जाते हैं। इसी प्रकार हम देखते हैं, कि क्या तुकाराम, क्या संत तुलसीदास, कबीरदास, यह सब और आज शरद पूर्णिमा के दिन हम जिनकी जयन्ती मना रहे हैं, गुरुनानकदेव जी, सभी ने आधुनिक जनता के लिए यही एक साधना बतायी, केवल मात्र नाम सुमिरन और सेवा, निरन्तर सब इन्सानों की, सब प्राणी मात्र की सेवा करते रहो, निःस्वार्थ हो करके, स्वार्थ को त्याग करके सेवा करो और निरन्तर भगवत् सुमिरन करो, भगवान् को एक क्षण भी नहीं भूलना, हमेशा उठते-बैठते, आते-जाते, काम करते, आराम में, अन्दर-बाहर, रात-दिन, सब हालत में, सब जगह में, सब स्थान में, काम के बीच में हमेशा सर्वदा, निरन्तर सुमिरन बनाये रखो। सुमिरन कर ले करके गुरु नानक जी का एक सुन्दर भजन है- **'सुमिरन कर ले मेरे मना, बीती जात उमर हरि नाम बिना, सुमिरन करले मेरे मना'** - उनका दिया हुआ जो साधन है वह दुनिया की आधारशिला है।

सुमिरन अर्थात् नाम को रटते रहो, भगवान् के नाम से भगवान् स्वयं तुम्हारे सामने आ जाएँगे। नाम में यह प्रभाव है, भगवान् का जो अदृश्य रूप है, उस दिव्य स्वरूप को तुम्हारे सामने साक्षात् बनाने की, साक्षात् करा देने की शक्ति नाम के अन्दर है। नाम, सुमिरन और सेवा यह तीन उत्कृष्ट साधन हैं। यदि स्वार्थ को परिपूर्ण रूप से तिलांजलि देकर के, अपने जीवन को व्याप्त रूप में सेवा परायण हम बना दें और निरन्तर सब कर्तव्य कर्मों के बीच में, सब व्यवहार के बीच में भगवान् को नहीं भूलते हुए सुमिरन बनाये रखें और जीवन में सदा सर्वदा भगवान् के नाम का उच्चारण होता रहे, तब यही प्रपंच बैकुण्ठ बन जाएगा तथा यहीं पर मानव मुक्त हो जाएगा। नाम का इतना प्रभाव है। नाम का क्या प्रभाव है? नाम का प्रभाव यही है कि अनुभव प्राप्त किये हुए महापुरुष संतों ने अपने स्वयं साक्षात् अनुभव के आधार पर यह अभिव्यक्त किया है कि नाम और भगवान् एक ही हैं, नाम अलग भगवान् अलग दो ऐसे तत्त्व नहीं हैं। भगवान् और नाम बिल्कुल अभेद हैं, अभिन्न हैं, इन दोनों की एकता को उन्होंने अनुभव किया और अनुभव करके घोषित किया है कि भगवान् ही नाम का रूप धारण करके जीवात्मा का उद्धार करते हैं, नाम से बना हुआ मन्त्र - राम से बना हुआ मन्त्र हो, शिव से बना हुआ मन्त्र हो, नारायण से बना मन्त्र हो-**ॐ नमो नारायणाय, ॐ नमः शिवाय, ॐ श्री रामाय नमः, ॐ श्री राम जय राम जय जय राम, ॐ श्री दुर्गायै नमः** इत्यादि कोई भी मन्त्र क्यों न हो, जब उसके अन्दर नाम है न, तो नाम से बना हुआ मन्त्र भगवान् का प्रगट स्वरूप प्रत्यक्ष प्रगट स्वरूप, भगवान् स्वयं मन्त्र स्वरूप को धारण करके जीवात्मा के जीवन में आकर के, उनका उद्धार करते हैं अपनी दिव्य शक्ति द्वारा ! यही नाम के अद्भुत प्रभाव का रहस्य है।

वेदान्त कहता है, यह ब्रह्म तो अतीत है, परातत्त्व है, ना मन उसका ख्याल कर सकता है, न बुद्धि उसको ग्रहण कर सकती है, इन्द्रियों की तो बात ही क्या है! यह निराकार, निर्गुण परात्तत्त्व परब्रह्म जो है, यह हमारी पहुँच

से परे है, और यह जगत्, नाना रूपों वाला जगत् कैसे प्रगट हुआ, सो इस विषय में कहते हैं कि सब से प्रथम वो अव्यक्त, जो एकमेव एवं अद्‌वितीय रहा और कुछ चीज थी ही नहीं, वो इस सृष्टि के परे उस काल में एक विचित्र, एक रहस्यात्मक निर्गुण एक दिव्य ध्वनि के रूप में प्रगट हुआ, एक दिव्य नाद के रूप में प्रगट हुआ, उस दिव्य नाद को ही हम प्रणव कहते हैं, उसको 'ॐ' ऐसा कहते हैं! तो यह प्रणव जो है, भगवान् का सबसे प्रथम एक प्राकट्य है, इसको वेदान्त कहता है शब्द ब्रह्म, या नाद ब्रह्म। इसको ब्रह्म से अलग नहीं मानते हैं, इसको बोलते हैं यह साक्षात् ब्रह्म ही है लेकिन नाद के रूप में है, एक शब्द के रूप में ब्रह्म है और जितने भी नाम, जितने भी मन्त्र हैं, यह सब नाद ब्रह्म के या शब्द ब्रह्म के रूप रूपान्तर हैं, अनेकानेक रूप-रूपान्तर हैं। यही नाम की शक्ति का आधार है, शक्ति का स्रोत है, क्योंकि सब नाम, सब मन्त्र प्रणव से उत्पन्न हुए हैं, उनकी उत्पत्ति प्रणव है, प्रणव साक्षात् परब्रह्म तत्त्व ही है, परब्रह्म से भिन्न नहीं है तो समस्त दिव्य शक्तियाँ नाम में निहित हैं, तभी तो भजन में कहा हुआ है, 'महादेव सतत् जपत दिव्य राम नाम, काशी मरत मुक्ति करत कहत राम नाम' जब राम को ग्रहण करके नाम का अभ्यास हम करते हैं, तो यह स्पष्ट हमारे सामने रहना चाहिए कि नाम का वास्तविक स्वरूप क्या है, साक्षात् परब्रह्म स्वरूप है, साक्षात् भगवत् तत्त्व से ओत-प्रोत है, सब शक्ति इसी में निहित है, जब नाम को हमने हृदय में बसा दिया, जिह्वा में रखने लगे, तो हमारे साथ भगवान् एक विशेष रूप में अपना निवास ले लेते हैं, वैसे तो भगवान् सर्वान्तर्यामी हैं, सब में निवास करते ही हैं, लेकिन जब हम नाम का अभ्यास करने लग जाते हैं तो एक विशेष रूप में भगवान् हमारे अन्दर निवास करने लग जाते हैं। संसार के बन्धन को तोड़ करके हमें मुक्त करने की शक्ति नाम में निहित है, मन्त्र में निहित है, इसलिए जब हम मन्त्र जप करने लगते हैं, जप योगी बनते हैं, तो हमें यह नहीं समझना है कि हमने भगवान् के नाम को प्राप्त किया, समझना चाहिए हमने भगवान् को ही प्राप्त कर लिया है, और जब तक हमारे पास नाम है, जहाँ पर भी हम जाएंगे हम भगवान् के साथ हैं, भगवान् हमारे साथ हैं, और यह जब हम महसूस करने लग जाऐंगे कि जहाँ भी मैं हूँ मैं भगवान् के सामने हूँ, तो हमारा जीवन अपने आप दिव्य बन जाएगा।

और यह नाम, जिसे जप कहते हैं, उसमें निहित जो शक्ति है, उसको जागृत करने की क्या विधि है? तो कहते हैं कि जितना जितना हम उसको रटते गये, उस मन्त्र को रटते रटते, अभ्यास करते गये, तो जो उनके अन्दर छिपी हुई अप्रगट शक्ति है, धीरे धीरे उसका विकास हो जाता है, उसमें जागृति आ जाती है। नाम का अभ्यास ही यह गुप्त और सुप्त शक्ति को जागृत करने का, विकसित करने का तरीका है। लेकिन अभ्यास जो है क्रमबद्‌ध होना चाहिए। नियमित रूप में होना चाहिए, एक ही नियमित समय, नियमित स्थान, नियमित संख्या में, बिना चूके प्रतिरोज उसका अभ्यास हमें करते रहना चाहिए और उसको धीरे धीरे बढ़ाते जाना चाहिए। नाम की जप संख्या को बढ़ाते जाना चाहिए और बाकी समय में चलते फिरते, व्यवहारिक समय में भी इस मन्त्र को सदा-सर्वदा रटते रह सकते हैं। इसमें कोई पवित्र-अपवित्र, अथवा नहाने के पहिले नहीं होना चाहिए, नहाने के बाद ही होना चाहिए, यह सब योग के वास्ते, मुक्ति के वास्ते जो नाम का अभ्यास करता है उनके लिए कोई नियम-निष्ठा, देश-काल, कुछ नहीं है। हाँ, सकाम भाव से, कुछ न कुछ यहाँ पर, हमारे व्यावहारिक जगत् में कुछ भौतिक फल प्राप्ति के वास्ते कोई नाम का जप करना हो, तो उनके लिए नियम-निष्ठा चाहिए, स्नान करके होना चाहिए, खाने के बाद नहीं होना चाहिए। नियम-निष्ठा तब आता है, जब हम सकाम्य भाव से यहाँ के कुछ फल की प्राप्ति

के वास्ते करते हैं, तब सब लागू है। लेकिन केवल मात्र भगवत् प्रेम के वास्ते भक्ति भाव के साथ, मोक्ष के वास्ते हम जो करते हैं उसके लिये कोई नियम आदि नहीं है। सदा सर्वदा नाम को हम रटते रह सकते हैं।

सुमिरन रखना, नाम रटते जाना, नाम को लिखते भी जाना, इससे हमारी धारणा शक्ति बढ़ती है। देखिए जप से धारणा शक्ति बहुत जल्दी बढ़ती है, शीघ्र अति शीघ्र बढ़ती है। मन की एकाग्रता बढ़ती है। जप जितनी संख्या में हो सकता है उतना 'अधिक से अधिकतम फल' कहते हैं, यही उद्देश्य होना चाहिए, लेकिन कम से कम ११ माला से कम किसी भी साधक को जप की नहीं करना चाहिए। उससे ज्यादा करने के लिए कोशिश होनी चाहिए, लेकिन कम से कम ग्यारह माला प्रति रोज बाकायदा एक आसन में बैठ करके नाम को रटना चाहिए और साथ-साथ दो चार नियम हैं जो कि हरेक साधक को अपने मन में रखने चाहिए। किसी ने नाम प्राप्त किया हो तो उस नाम को किसी दूसरे के पास बताना नहीं चाहिए, यह आपके और भगवान् के बीच की बात है और किसी का उसमें कोई मतलब नहीं, इसलिए वो आपके और भगवान् के बीच में ही रहना चाहिए, किसी को बताना नहीं चाहिए। इसलिए जब और कोई दूसरा व्यक्ति पास हो तब नाम को ऊँची आवाज से नहीं उच्चारण करना, अन्दर ही अन्दर मानसिक जप करना चाहिए। जब हम अकेले हैं तब खूब आवाज से नाम का उच्चारण हो सकता है। किसी के कान में अपने नाम का जप नहीं करना चाहिए और जिस जिह्वा से हमने नाम का अभ्यास करना शुरू कर दिया, नाम का महत्त्व, नाम की महिमा, नाम की गरिमा, नाम की अत्यंन्त पवित्रता, यह सब आपने भलीभाँति अभी खूब अच्छी तरह से समझ लिया है, तो जैसा कि मैंने अभी कहा है कि नाम स्वयं भगवान् ही है, इसलिए उस दिव्य नाम को जब हम अभ्यास करने लग गये तो अपनी जिह्वा की पवित्रता को हमें बनाए रखना चाहिए, हमेशा सुरक्षित रखना चाहिए। तो उस जिह्वा से कदापि असत्य नहीं बोलना चाहिए। 'मेरी जिह्वा से केवल मात्र सत्य वचन ही निकलेगा, नहीं तो खामोश हो जाऊँगा, लेकिन असत्य जो है कदापि जिह्वा से नहीं निकल पाएगा' ऐसा सत्यव्रती बनना चाहिए।

प्रभु साक्षात् दया के सागर, प्रेम के सागर हैं। प्रेम, दया, क्षमा ये सब प्रभु का स्वभाव है और उनका नाम जिस जिह्वा से रटते हैं, उस जिह्वा से केवल मात्र जो कुछ वाणी वार्ता निकलती है, वो स्नेहमय, प्रेममय, सात्त्विक होनी चाहिए। उसमें कदापि द्वेषमयी निन्दा का, या क्रोध का कठोर वचन, कड़वा वचन नहीं आना चाहिए। जिह्वा से जो भी वचन निकले, उससे किसी का दिल दुखना नहीं चाहिए, किसी के अन्दर अशान्ति बेचैनी नहीं आनी चाहिए, ऐसा ही वचन होना चाहिए मधु जैसा मधुर। जो औरों के दिल में शान्ति, औरों के दिल में एक आशा, औरों के दिल में एक उत्साह, औरों के दिल में सुख और शान्ति प्रदान करे, ऐसा ही वचन जिह्वा से बोलना चाहिए, क्योंकि क्रोध, द्वेष, घृणा, कठोरता यह सब आसुरी सम्पदा हैं और दिव्य नाम रटने वाली जिह्वा से आसुरी तत्त्व नहीं निकलना चाहिए। और जब हम प्रभु के नाम को लेकर के अपने हृदय में स्थापित करते हैं धारणा के वास्ते, जैसा मैंने अभी कहा, वो शरीर विशेष रूप में भगवान् का निवास-स्थान बन जाता है, 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति' वो तो ठीक है, लेकिन जब हम साक्षात् प्रभु को मन्त्र रूप में ग्रहण करके उसको जिह्वा स्थान पर रखते हैं, तब एक विशेष रूप में यह शरीर भगवान् का चलता फिरता मन्दिर बन जाता है, इसलिए इस मन्दिर को अत्यन्त पवित्र रखना यह हमारा विशेष कर्तव्य बन जाता है, ऐसा नाम जिसने लिया है, नाम का

अभ्यास ही मुख्य साधन होना चाहिए। हमारा जो कुछ जप, तप, पूजा, पाठ है, सब नाम के आधार पर होना चाहिए। ध्यान हो, जप हो, पूजा हो, सब नाम के आधार पर। नाम हमारी समस्त साधना का मुख्य तत्त्व, बीच में गड़ा हुआ खम्बा जैसा कि टेन्ट में सबसे ऊपर यह पोस्ट होता है, ऐसे इस नाम का स्थान है! केन्द्रीय स्थान है!

हमारे जीवन में और हमारी समस्त साधना में आध्यात्मिक जीवन को सहयोग देने वाला केन्द्रीय स्थान नाम का है। इसलिए यह नाम जब हमारे हृदय में है, तो इस शरीर के द्वारा समस्त वाणी बर्ताव अत्यन्त धार्मिक और शरीर से हमेशा सत्कर्म और सदाचार ही होना चाहिए। किसी प्रकार के अनुचित एवं दूषित कर्म इस शरीर के द्वारा नहीं हों-काया वाचा मनसा सदा शरीर को पवित्र रखें, सदाचारी बनें, उत्तम हमारा चरित्र हो, पवित्र हमारा चरित्र हो और हमारा जीवन धार्मिक हो, ऐसी चेष्टा होनी चाहिए। जिसने नाम को अपना लिया है, नाम का अभ्यास करता है, ऐसे साधक को चाहिए कि अपने शरीर को, अपने जीवन को, अपने वर्ताव को, अपने चरित्र को, अपने आचरण को सर्वतोमुखी पवित्रता से ढक कर रखे। नाम जप में सफलता पाने का यह एक मार्ग है। इस प्रकार के जीवन में यदि नाम का अभ्यास हो, तब जैसे सूखी माचिस दिया सलाई की डिब्बी के ऊपर लगाते ही एकदम अग्नि सुलग जाती है, ऐसा जीवन बन जाएग। हमारे अन्दर से नाम की साधना का यदि ऐसा तुरन्त फल नहीं है, तो क्या होता है, यदि क्षेत्र तैयार नहीं जीवन धर्म के ऊपर आधारित नहीं है तो हम रटते ही रहते हैं, रटते ही रहते हैं, लेकिन एक गीली माचिस, गीली दिया सलाई, गीली डिब्बी, ऐसा बन जाता है। सब कुछ सामग्री तो है, लेकिन उसके अन्दर और कुछ आ गया है, गीलापन आ गया है इसलिए अग्नि नहीं आती है, ऐसा हमारे अन्दर सब कुछ सामग्री आ गयी है, लेकिन हमारे जीवन में कुछ गीलापन, ढीलापन, ऐसा आ गया तो फिर यह हमारी साधना को पकड़के रोक रखता है। यदि जीवन में पवित्रता नहीं है, परिपूर्ण पवित्रता नहीं है, तो साधना आगे नहीं बढ़ेगी, पवित्रता प्रत्येक साधना का आधार है।

नाम के अभ्यास करने वाले को चाहिए, जितना हो सके एक साल में नाम का अनुष्ठान करना चाहिए। ३०, ३० दिन में, ४०, ४० दिन में, 'मैं हर दिन बिना चूके चार घंटे जप करूँगा या करूँगी,' ऐसा करके नियम रख करके फिर ४० दिन तक प्रतिदिन बिना चूके चार घंटे जप करना, इस जप को अनुष्ठान कहते हैं। नहीं तो और भी हो सकता है कि नाम का पुरश्चरण करने के लिए कोशिश करना। पुरश्चरण की यह विधि होती है कि जितने अक्षर आपके मन्त्र में हैं, उतने लाख संख्या में उस मन्त्र का जप करना, और वो भी एक नियमबद्ध तरीके से, 'मैं इस प्रकार इतनी संख्या जप, इतने समय के अन्दर पूरा कर लूंगा,' उसका हिसाब करके, करना पड़ता है। मानो ५ अक्षर हैं हमारे मन्त्र में, तो ५ लाख तक जप करना होगा, एक घंटा में आप जितना कर सकते हैं, उसे यदि ४० दिन के अन्दर पूरा करना होगा तो प्रतिदिन कितना घंटा इसका जप होगा ऐसा हिसाब करके उसके आधार पर प्रतिदिन बिना चूके, कोई ६ घंटे, कोई ८ घंटे, कोई १० घंटे करता है, कोई ४ घंटे करता है, जैसी आप की परिस्थिति है, आप रिटायर्ड आदमी हैं तो पूरा समय आपका है, ज्यादा से ज्यादा जप में लगा सकते हैं, आप सर्विस वाले आदमी है तो सीमित ही आपको सम्भावना है, तो हो सकता है ३ घंटे टाईम हम जप के लिए दें, ऐसा करके प्रति साल में एक दो पुरश्चरण समाप्त करने के लिए लम्बा मन्त्र हो गया तो मुश्किल है। यदि ॐ नमो भगवते

वासुदेवाय है तो द्वादश अक्षर हैं १२ लाख करना पड़ेगा। जैसे भी हो, करें! जप द्वारा नाम स्मरण बनाये रखें! भगवान् से सम्बंध जोड़ कर रखें।

हरि ॐ तत् सत्! श्री परमात्मने नमः !

४.विद्यार्थियों के लिए आदर्श जीवन

(केन्द्रपाड़ा, ओडिशा में दिया गया प्रवचन)

ॐ श्री परमात्मने नमः ! पवित्र उत्कल प्रदेश के हमारे प्रिय युवक वृंद तथा छात्र गण! पुण्यभूमि भारतवर्ष के हमारे आत्म बन्धुगण !

मुझे आज अत्यंत प्रसन्नता है, दिल को बहुत आनन्द है कि आपके समक्ष कुछ विचार रखूँगा। इसलिए भी विशेष प्रसन्नता है क्योंकि आपके पास आकर इन विचारों को आपके चिन्तन के लिए, आपके मनन के वास्ते रखने से दो प्रयोजन हैं। और दोनों प्रयोजन हैं- एक तो साधारण और दूसरा असाधारण प्रयोजन। दोनों प्रयोजन इसलिए महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि इस तरह के अच्छे विचार को प्राप्त करना, खासकर के इस अवस्था में, बाल्यावस्था में, छात्रावस्था में, इसकी सबसे अधिक आवश्यकता है। क्योंकि यह आपके जीवन की प्रारम्भिक निर्माण की अवस्था है और आपके व्यक्तित्व के, स्वभाव के निर्माण की अवस्था है। इस समय अगर आप जीवन का अच्छे से

अच्छा विचार प्राप्त कर लें, तब आप अपना स्वभाव और व्यक्तित्व बहुत सुन्दर तरीके से, सराहनीय रीति में बना सकते हैं। यदि इस प्रकार की पथ-प्रदर्शनी, मार्ग-दर्शनी प्रेरणा आपको इस समय नहीं प्राप्त हुई और आप उससे वंचित रहे तो आपका चरित्र अव्यवस्थित और बेढंगा बन जाएगा।

इस समय में समाज के द्वारा, चारों ओर के वातावरण और पर्यावरण के द्वारा जो कुछ प्रभाव आपके ऊपर होता है, उसी तरह से आप बनते जाएँगे। वह अच्छा प्रभाव या दुष्प्रभाव, कुछ भी हो सकता है, क्योंकि मन का ऐसा स्वभाव है कि जैसा वह चारों तरफ देखता है, उसे ग्रहण कर लेता है, जैसे कि कैमरे के अन्दर की फिल्म है। जैसे ही उसे किसी के सामने किया जाता है, उसका वैसा ही चित्र वो अपने ऊपर ले लेता है। इसलिए इस समय में यदि कुछ अच्छा और आदर्श, यशस्वी, उन्नत विचार आपने ग्रहण नहीं किया, तो ऐसे ही अपने आप आपका स्वभाव बिगड़ जाएगा और कुछ साल बाद आगे २५-३० वर्ष में आकर जब आप आत्म-निरीक्षण करते हैं तो आप को महसूस होता है कि, 'अरे मेरा स्वभाव, मेरी आदत गलत रीति में बदल गये। मेरे अन्दर गलत आदत है, अवगुण है, दोष है,' किन्तु उस समय में आपको ऐसा ज्ञान प्राप्त होते हुए भी आप कुछ नहीं कर पाएँगे। तब तक बहुत देर हो चुकी होगी।

क्योंकि ये इतनी अच्छी तरह से आपके अन्दर स्थापित हो चुका है। उस समय में ये आपके स्वभाव में जम जाता है, परिवर्तन आप नहीं कर सकते हैं। जैसे ईंटों के भट्टे में ईंट बनाते हैं, उस समय जब तक ईंट भट्टे में नहीं जाती है, तब तक आप उसका आकार बदल सकते हैं, क्योंकि वह नरम है। लेकिन एक बार जब ईंट भट्टे में चली जाती है, पक जाती है, तो आप उसमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकेंगे। परिवर्तन की कोशिश करेंगे तो टूट जाएगी, टुकड़े हो जाएँगे, लेकिन उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता है। और उसी तरह देखिए जैसे कोई छोटा पेड़ है, जब तक अभी पौधा है, तभी तक आप उसे झुका सकते हैं, एक बार जब वह बड़ा पेड़ हो गया, अकड़ गया, फिर तो आप उसको झुका नहीं सकते हैं। इसीलिए गुरु महाराज और सभी मनोवैज्ञानिक एवं विचारक बोलते हैं, कि जिस प्रकार का स्वभाव हम बनाना चाहते हैं, अपने को जिस प्रकार के भी ढाँचे में हम ढालना चाहते हैं, जिन भी सदगुणों को अपनाना चाहते हैं, अच्छे गुणों को अपनाना चाहते हैं, जिन नकारात्मक दुर्गुणों को निकालना चाहते हैं, वह सब काम युवावस्था में होना चाहिए। युवावस्था, बाल्यावस्था, छात्रावस्था में करना चाहिए। तब कुछ भी आप कर सकते हैं। इसलिए, इस समय में, इस अवस्था में अच्छे तत्त्वों को ग्रहण करना चाहिए, अच्छी आदतों को अपनाने के लिए अपना आत्म-निरीक्षण करना होगा। आत्म-निरीक्षण करके जो कुछ अपने आप के बारे में आप देखते हैं और उससे निष्कर्ष निकालते हैं, तो परिवर्तन वहाँ पर करना पड़ेगा।

यह कार्य आपने अभी इस समय में किया तो आपका भविष्य का जो जीवन है, जब आप बड़े हो जाते हो, स्कूल-कालेज से निकल कर समाज में नागरिक बन जाते हो, तो बहुत सुन्दर चरित्र हो जाएगा। आदर्श रहेगा, आपके रहने से बहुत लोगों को लाभ होगा, उनके लिए एक आदर्श होगा, समाज के लिए लाभ होगा। आप भी सुख और शान्ति का जीवन व्यतीत कर सकेंगे। अगर अभी चरित्र नहीं बना तो कई प्रकार की समस्याएँ और अशान्ति जीवन में आ जाएगी। आप के द्वारा आपका अपना जीवन भी अशान्ति और संघर्ष से पूर्ण जीवन बन जाएगा और

दूसरों के लिए भी। माता-पिता, भाई-बहन, बन्धु, समाज, सबके लिए संघर्षमय हो जाएगा। सबके जीवन का अहित होगा। इस समय आपके जीवन का जो हिस्सा है, वह जैसे इमारत बनाते समय बुनियाद डालते हैं, वैसा ही अगर नींव पक्की हुई, तो इमारत बहुत सुन्दर और तगड़ी होती है। अगर नींव कच्ची हुई तो इमारत नहीं रह सकती है। इसी प्रकार से अभी आपके जीवन की बुनियादी अवस्था है, प्रारम्भिक अवस्था है, इसलिए इस समय में आपके भाव को, आपके विचार को मजबूत बनाना, तगड़ा बनाना, महत्त्वपूर्ण बनाना, यशस्वी और सुन्दर बनाना अनिवार्य है। यह कार्य आपके स्कूल की शिक्षा के साथ-साथ करने की अवस्था है। १४-१५ साल से ३० साल तक के यह जो १५ वर्ष हैं, यह हरेक व्यक्ति के जीवन का अमूल्य और सोने जैसा सुनहरी समय है।

इस समय में आपको अपने ऊपर संयम रखते हुए, अपने चरित्र को उत्तम बनाने की कोशिश करनी चाहिए। इस समय मैं आपके सामने आकर कुछ बात बोलूं तो मैं समझता हूँ कि यह बहुत आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है। इसलिए इस समय मैं अत्यंत सोच-विचार कर इन बातों को आपके सामने रख रहा हूँ, अतः आप शान्त चित्त होकर, ध्यान देकर ग्रहण कीजिए, आपको बहुत लाभ होगा। इसका प्रयोजन क्या है? इसका महत्त्व महान् है, एक तो यह आपके जीवन के लिए महान् प्रयोजन रखने वाला है। दूसरा प्रयोजन यह है कि आप हमेशा इसी विवेकानन्द महाविद्यालय में तो नहीं रहेंगे। आप बाद में उच्च शिक्षा प्राप्त करने कटक, भुवनेश्वर, ब्रह्मपुर या और कहीं भी जाएँगे, जहाँ पर आप अपने विश्वविद्यालय की शिक्षा चाहे बी.ए., बी.एससी., एम.एससी., इन्जीनियरिंग या मेडिकल आदि कुछ भी करेंगे। जब आप विश्वविद्यालय से भी उत्तीर्ण होकर डिग्री हासिल करके बाहर आते हैं, उस समय में आप का जो व्यक्तित्व है, सिर्फ छात्र जीवन का नहीं रहेगा।

उस समय आप इस राष्ट्र के, इस पुण्यभूमि भारतवर्ष जो हमारी मातृभूमि है, के सदस्य बनेंगे, नागरिक बनेंगे। इसलिए इस राष्ट्र की भावी पीढ़ी आप हैं। इस राष्ट्र के भविष्य के समान आप हैं। इस राष्ट्र की परिस्थिति क्या है? ये आप जानते हैं। सिर्फ राष्ट्र की बात नहीं है, बात मानवता की भी है। मानव समाज में आजकल जो स्थिति है, यह भी आप जानते हैं। ये जानकर हमें वर्तमान परिस्थिति को सुधारने का कार्य करना है, जो आपके द्वारा होगा। जो आजकल बड़े हैं, उनके द्वारा ये नहीं होने वाला है। भारतवर्ष का भविष्य आपके हाथों में है। हमारी मातृभूमि के भविष्य की प्रजा आप हैं। इसके लिए जब मैं आपको बोलता हूँ तो विद्यालय के छात्र समझ कर, इस दृष्टि से नहीं बोल रहा हूँ। आप भविष्य हैं भारत के, ऐसा जानकर मैं कह रहा हूँ। आप भारतीय हैं, भारत की संस्कृति, आपकी संस्कृति है। भारत की संस्कृति क्या है, ये आप समझने की कोशिश करें। आपके स्कूल-कालेज के पाठ्यक्रम में फिजिक्स, केमिस्ट्री, साहित्य, हिसाब, बायोलोजी, भूगोल आदि विभिन्न विषय हैं। भारतीय संस्कृति आपका विषय नहीं है। भारतीय संस्कृति के ज्ञान से हमारे छात्रों को वंचित रखना सही शिक्षा प्रणाली नहीं है। इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली नीरस प्रणाली रहेगी। यदि आपने केवल विषय ही पढ़े और संस्कृति को ग्रहण नहीं किया, तो यह शिक्षा की सही शोभा नहीं होगी।

अन्त में, किसी भी राज्य में, देश में, जन समुदाय में, समाज में, उसके व्यक्तियों का वास्तविक सांस्कृतिक स्वरूप क्या है? इस संस्कृति के वो प्रतीक बनने चाहिएँ, जो संस्कृति पूर्वजों से उन्हें प्राप्त है। वो

संस्कृति उसके अन्दर की ऊर्जा से, सौंदर्य से, हर एक के अन्दर से प्रकट होनी चाहिए। संस्कृति कैसे जानी जाती है? संस्कृति शिल्प कला से, बड़े-बड़े प्राचीन स्मारकों से, भवनों से और वास्तु शिल्प से नहीं जानी जाती है। संस्कृति को प्रजा से जाना जाता है, जनता से, उनके रहन-सहन के ढंग से और चरित्र से जाना जाता है। यदि आपके अन्दर आपकी संस्कृति और उसके महत्त्वपूर्ण तत्त्व आकर उज्ज्वल रूप में प्रगट नहीं होते हैं, तो आपका जीवन क्या है? आप ज्ञानहीन एवं बुद्धिहीन मशीनी इनसान नहीं हैं, रोबोट नहीं हैं। आप सजीव, सक्रिय इनसान हैं। आपके अन्दर इनसानियत का सौंदर्य क्या है? ये बाहर निकलना चाहिए। ये आपके बर्ताव से बाहर निकलना चाहिए। मनसा, वाचा, कर्मणा- आपके मन से, वाणी से और कर्मों से यह निकलना चाहिए। अगर इसके लिए आपकी शिक्षा में इंतजाम नहीं है तो ये शिक्षा प्रणाली अपूर्ण है, अधूरी है। आज आपके सामने संस्कृति के बारे में दो-तीन विचार में रखना चाहता हूँ। यहाँ पर मेरे सामने दो पेम्फ्लेट (चौपन्ने) हैं, उसमें से एक में, एक गीत छपा है जो स्वामी जी महाराज आपके सामने रखना चाहते हैं। यह भारत की संस्कृति के बारे में, सौंग औफ गोविन्दा (गोविन्द का गीत) है। दूसरे सुन्दर चौपन्ने में एक तरफ १८ सद्गुणों के बारे में गीत की लय है। उसे मैं आपके सामने रखूँगा और यह दोनों चौपन्ने आपके प्रिंसिपल साहेब को दूँगा, यह आपके घर ले जाने के लिए हैं। लेकिन जो विचार आज मैं आपको बताने वाला हूँ, वो इसमें लिखा नहीं है। ऐसा विचार बताने के लिए शायद कभी-कभी ही आपके पास आएंगे। हमारे प्यारे सद्गुरु महाराज छात्रों को, युवकों को, अमूल्य समझते थे। आप सब भारतवर्ष के अमूल्य श्रोता हैं।

आप सब नवरत्न के समान हैं। भारतवर्ष की अमूल्य सम्पत्ति आप हैं। सच्चा ऐश्वर्य आप हैं। गुरुदेव का युवकों के प्रति, आप सब के प्रति बहुत प्रेम रहा, इसलिए वो युवकों को अच्छी दिशा में प्रेरित करने के लिए बहुत उत्सुक थे। ऐसा वे स्वयं कहते थे। इसलिए उनकी बातों को मैं आपके सामने रख रहा हूँ। जो जीवन आपके सामने है- जब आप स्कूल, कालेज से उत्तीर्ण होकर बाहर जाएँगे तब अपने उस जीवन के सम्बंध में आपका क्या दृष्टिकोण होगा? अपने जीवन के प्रति आपका स्पष्ट दृष्टिकोण होना चाहिए। हमेशा सोचिए कि आप अपने जीवन को किस तरह का बनाना चाहते हैं? हमेशा पुस्तकीय जीवन नहीं होगा। जीवन जीने के लिए पुरुषार्थ करना होगा, कई प्रकार के विघ्न और बाधाओं का सामना करना पड़ेगा।

इस सबसे आप अपने जीवन को किस प्रकार से आगे ले जाएँगे। इस विषय में एक बहुत महत्त्वपूर्ण एवं अमूल्य तत्त्व मैं आपको देना चाहता हूँ, उसको हृदय में रखकर अभी आप एक प्रकार की प्रतिज्ञा कीजिए कि 'जो कुछ भी स्वामी जी ने कहा है, वो मैंने बहुत बड़ी चीज प्राप्त की है, और मैं अपना जीवन उसी के आधार पर व्यतीत करूँगा।' वह क्या है? सर्वसाधारण जनता, जीवन के प्रति यह दृष्टि रखती है, कि जीवन उसी प्रकार का बनाना चाहिए जिससे हमें जीवन से ज्यादा से ज्यादा सुख, ऐश्वर्य प्राप्त हो। हमारा सुख होना चाहिए, भला होना चाहिए। हमेशा ज्यादा से ज्यादा सुख प्राप्त हो, सभी ऐसा जीवन बनाना चाहते हैं। अपने प्रिय मित्रों, छात्रों और युवकों से मैं करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि यह जो दृष्टिकोण है, बहुत अल्प दृष्टिकोण है, यह क्षुद्र दृष्टि है। यह भारतीय दृष्टिकोण नहीं है। यह बहुत साधारण दृष्टि है। जिसमें ज्ञान नहीं है, जिसके अन्दर विवेक नहीं है, जिसके सामने कोई आदर्श नहीं है, जो भौतिकवादी और स्वार्थपरायण है, केवल अपने ही बारे में सोचकर जीवन बनाना चाहता

है, वो सच्चा इनसान नहीं है। उसका जीवन बहुत नीचे स्तर में चला जाएगा। आपको ऐसा आदमी नहीं बनना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आपका जीवन यशस्वी हो। मैं चाहता हूँ कि आपका जीवन पूर्ण हो, महान् हो। जीवन के प्रति आपका दृष्टिकोण ऐसा होना चाहिए कि 'भगवान् ने मुझे यह जन्म दिया है। मैं अन्य पशु-पक्षी, जीव-जन्तु जैसा नहीं हूँ। मैं बुद्धिजीवी हूँ, मेरे अन्दर विचार शक्ति है, मेरे अन्दर भगवान् ने भाव दिया है और मेरे अन्दर अच्छा सौभाग्य दिया है, शिक्षा दी है, तालीम दी है, इसलिए भगवान् के द्वारा दी हुई क्षमता का प्रयोग करके मैं ऐसा जीवन बनाऊँगा कि अपने जीवन से किस प्रकार मैं औरों को सुखी बना सकता हूँ, मैं यही विचार रखूँगा कि मैं अपने जीवन द्वारा औरों का क्या भला कर सकता हूँ, कैसे सुखी बना सकता हूँ।' अच्छी तरह सुनिये। कभी-कभी आप लोग किसी अस्पताल में जाना, एक-एक कक्ष में जाकर दुःखियों को, दर्द में पड़े लोगों को देखना और यह भी देखना वहाँ हर रोज कितने लोग मरते हैं, यह देखना। कभी कभी श्मशान भी जाना और वहाँ जाकर हरेक इन्सान की अंतिम दशा क्या है, ये देखना। एक चीज जान लो कि एक दिन सबको जाना है। हम सबको जाना है। बड़े-छोटे, ऊँच-नीच, स्त्री-पुरुष, पढ़े-लिखे, अनपढ़, ब्राह्मण, भिखारी, मुख्य मन्त्री, कुली-मजदूर, सबको जाना है। इसलिए हमें यहाँ थोड़े समय के लिए रहना है।

इसलिए जब तक हमें रहना है और जब तक हम रहेंगे ऐसा जीवन बनाएँगे जिससे कि हमारे जीवन से दूसरों का भला हो, पर उपकार हो, सेवा हो। ईश्वर ने हमारे जीवन से दूसरों के हित के लिए कुछ न कुछ प्रयोजन हो-ऐसा जीवन बनाया। ऐसा जीवन धन्य है। ऐसा जीवन यशस्वी जीवन है। ऐसा जीवन जिसने नहीं बनाया, वो आकृति में इनसान है, लेकिन असल में वो हैवान है। वह पशु ही नहीं, पशु से भी नीचा है। क्योंकि पशु जीवित अवस्था में भी काम आता है और मरने के बाद उसका चमड़ा भी काम आता है, जैसे ढोल बजाने के लिए। जैसे हाथी जब मर जाता है, तब भी उसका मोल उतना ही है जितना जीवित हाथी का। लेकिन कभी सुना है कि इन्सान का शरीर कोई काम आता है? हो सकता है शरीर विज्ञान के क्षेत्र में इन्सान का शरीर कुछ काम भी आता है। अन्यथा बाकी तो इन्सान को मरने के बाद उसे फूंक देते हैं, रखते नहीं। यदि जीवित अवस्था में आपने कुछ भला किया, तो यही शेष रहता है। भारतवर्ष में हमारी संस्कृति में कई आदर्शों को हमारे सामने रखा है।

सर्वप्रथम, अहिंसा धर्म सबसे ऊँचा है, जिसमें किसी को बाधा नहीं होती है। औरों को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं। हो सके तो औरों का भला करने का प्रयास करते हैं। औरों को किसी प्रकार का कष्ट नहीं देते हैं। दूसरा सत्य परायणता से बड़ा कोई धर्म नहीं है। उत्कृष्ट सद्गुण है सत्य। हरिश्चन्द्र को आज भी महान् कहते हैं, क्योंकि वे सत्य परायण थे। महात्मा गांधी को हम राष्ट्र के पिता मानते हैं। उनका बल क्या था? मर भी जाएँ, लेकिन सत्य का साथ नहीं छोड़ें। झूठ नहीं बोलें। और सी. आर. दास बंगाल के एक महान् आदर्श वकील थे। लेकिन वकालत में कभी झूठ नहीं बोले। वे इतने सत्यपरायण थे कि वो न्यायालय में जो कुछ भी बोलते थे, जज लोग उसको मान लेते थे। ऐसे सत्य परायण वकील थे। इसी प्रकार सत्य, अहिंसा के साथ और भी महान् आदर्श हैं। यह महान्, आदर्श अगर हमारे जीवन में हैं, तो हम जीवित हैं, अन्यथा हम मरे हुए के समान है। एक है परोपकार 'परोपकाराय इदं शरीरम्।' यह भारतीयता है। उसी का जीवन सच्चा जीवन है, जो परोपकार करता है। क्योंकि परमात्मा ने यह शरीर दिया है तुमको परोपकार करने के लिए, यदि परोपकार नहीं किया तो यह शरीर निरर्थक है।

वही इनसान सच्चा परोपकारी बन सकता है जिसके अन्दर सच्चरित्रता है। क्योंकि जो सच्चरित्र नहीं है, संयमी नहीं है, वह इन्द्रियों का गुलाम है। वो परोपकार नहीं कर सकता है। जो खुद गुलाम है वह क्या कर सकेगा ? सच्चरित्र ही परोपकार कर सकता है। इसके विषय में गुरु महाराज ने एक सूत्र कहा है, वो मैं आपको रटाऊँगा, आप मेरे साथ बोलो- 'व्हैन वैल्थ इज लौस्ट, नथिंग इज लौस्ट,' अर्थात् अगर पैसों का नुकसान हुआ तो कुछ नुकसान नहीं हुआ। 'व्हैन हैल्थ इज लौस्ट, समथिंग इज लौस्ट,' अर्थात् हमने ज्यादा खाने-पीने से, बुरा खानेपीने से अपने स्वास्थ्य को खो दिया तो थोड़ा सा नुकसान हुआ है, क्या? कि खोया हुआ स्वास्थ्य आसानी से वापस नहीं जाता है। इसलिए बहुत होशियार होना चाहिए, रहन-सहन, खाना-पीना सावधानी से खाना चाहिए। 'व्हैन कैरैक्टर इज लौस्ट, औल इज लौस्ट,' जब धन गया तब कुछ नहीं गया। स्वास्थ्य गया तब कुछ नुकसान हुआ। लेकिन अगर चरित्र चला गया तो सबसे ज्यादा नुकसान ! सब समाप्त हो गया! सर्वनाश हो गया! चरित्र सबसे अमूल्य चीज है। चरित्र हमारा सच्चा स्वास्थ्य है। धन से भी, आरोग्य से भी, चरित्र हमारा सबसे सच्चा स्वास्थ्य है।

अच्छा चरित्र वास्तविक स्वास्थ्य है। जिनके पास सच्चरित्र नहीं उनका सच्चा व्यक्तित्व नहीं, वह धनी व्यक्ति हो सकता है, किन्तु सच्चा व्यक्ति नहीं। सदाचारी बनना ! सदाचार के ऐश्वर्य को दृढ़ संकल्प करके अपनाना ! हम अपने चरित्र को हमेशा अच्छा रखेंगे! अभ्यास करके, प्रतिज्ञाबद्ध होकर, सच्चा पुरुषार्थ करके अपने अच्छे चरित्र को स्थापित करना, यह सभी का मुख्य कर्तव्य है। आप को विद्यार्थी होकर के, यह आपको खुद ही करना होगा। आपके माता, पिता और शिक्षक सिर्फ आपको प्रेरणा दे सकते हैं। लेकिन यह पुरुषार्थ आपको ही करना होगा।

हरि ॐ तत् सत् !

५.अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानें

(केन्द्रपाड़ा, ओडिशा में दिया गया प्रवचन)

उज्ज्वल आत्म स्वरूप! आप परम पिता परमात्मा की दिव्य सन्तान हैं। आप अजर, अमर, अविनाशी आत्मा हैं। आप ईश्वर का अंश हैं। 'ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः' अर्थात् हरेक जीवात्मा मेरा एक अंश है, ऐसा प्रभु गीता में अपना दिव्य ज्ञान उपदेश करते वक्त इस रहस्य को, आपके सच्चे स्वरूप के रहस्य को बताते हैं। ऐसा तो हर धर्म में, हर मजहब में कहा है। हर मजहब में इसका जिक्र है।

बाइबल में कहा है, इन्सान को बना के भगवान् ने अपनी आत्मा को, अन्तरयामी तत्व को उसके अन्दर स्थापित कर दिया। अतः वह मानव में निज आध्यात्मिक तत्त्व के रूप में निवास करता है। कुरान कहता है आदम खुदा नहीं है, खुदा से जुदा है, लेकिन खुदा के नूर से परिपूर्ण है, अल्लाह का नूर उसमें विद्यमान है। प्रत्येक इनसान के अन्दर ईश्वर की एक ज्योति विराजमान है। ये नाम रूप का बाह्य स्वरूप, बाहरी दुनिया के लिए है। इसके अन्दर छिपा हुआ जो अजर अमर अविनाशी दिव्य स्वरूप है, वही असली स्वरूप है। अपने बारे में यह भावना होनी चाहिए कि मैं दिव्य आत्मा हूँ, अजर, अमर अविनाशी हूँ। मैं शाश्वत हूँ। मर मिटने वाला, प्रपचं का कीड़ा नहीं हूँ। यदि इस भाव में अपने को स्थापित रखेंगे तो, आपका जीवन भी उज्ज्वल हो सकता है। आपके जीवन से जो भी निकलेगा, उससे दिव्यता प्रगट होगी। वह कल्याणकारी हो सकता है। उससे सब के लिए हित और सुख एक-साथ होता है। यदि हम अपनी दिव्यता को भूल जाते हैं और अपनी छोटी सी अल्प मानवता, जिसमें काम है, क्रोध है, द्वेष है, हिंसा है, को याद रखते हैं, तब जीवन में सब खट-पट होता है। कार्य में, व्यवहार में चरित्र में, सब में विषमता का कारण यही है। मानव समाज को दुःख इसलिए है, क्योंकि मानव ने अपने दिव्यत्व को भुला कर एक तरफ रख दिया है और अपने अन्दर से केवल अपने मानसिक क्षेत्र की अपूर्णता को प्रकट करता है। माया का छोटापन, अविचार, अविवेक और अपूर्णता उससे बाहर आती है। इससे कभी कभी तमोगुण और रजोगुण बाहर आने लगता है। हम दिव्य हैं, यह जागृति हमारे अन्दर होनी चाहिए। हम दिव्य हैं, यह सक्रिय भाव हमारे अन्दर होना चाहिए, मनसा, वाचा, कर्मणा होना चाहिए। तब हमारे जीवन की चेष्टा में यह प्रगट हो सकता है। तब हमारे परिवार का कल्याण हो सकता है। आप आदर्श पुरुष, आदर्श स्त्री बन सकते हैं। आप स्वयं प्रगति कर सकते हैं। आप के जीवन से और भी प्रेरणा पा सकते हैं और यह विकास ही मनुष्य जन्म का उद्देश्य है। दिन प्रतिदिन हमारे अन्दर दिव्य, उत्तम, उत्कृष्ट स्वभाव की जागृति हो, उसका विकास हो, यही प्रगति है। वास्तविक जीवन यह है, ऐसा हम कह सकते हैं।

जहाँ दिन प्रतिदिन हमारे अन्दर दिव्यत्व की समृद्धि नहीं होती, वो जीवन दिव्य नहीं है। वो जीवन ऐसा है, जैसे बहता हुआ पानी रुक जाए तो वह गन्दा हो जाता हैं, उसमें काई जम जाती है। दुर्गन्ध आने लगती है। जीवन में वास्तविक समद्धि, प्रगति होनी चाहिए। यही जीवन है। जब यही नहीं है, तो जीवन में रुकावट आ जाती है। कई प्रकार का अन्धकार, विषमता आ जाती है। दुःख और शोक आ जाता हैं। मानव समाज में कल्याण अपने

आपके दिव्यत्व को पहचानने से है। अपने आपको सक्रिय दिव्यत्व का केंद्र बनाएँ। स्वयं को प्रेम का, क्षमा का, दया का, सत्य का, शान्ति का ऐसा केंद्र बनाकर अपना जीवन व्यतीत करें। तब मानव समाज का कल्याण हो सकता है। अन्यथा व्यक्ति अपना दिव्यत्व भूल कर क्षुद्र स्वभाव को प्रगट करता है, तो मानव समाज के लिए एक समस्या बन जाता है।

इस पर विचार कीजिए और जो कुछ भगवान् ने हमें दिया है, इसको हम सही दिशा में प्रवाहित करें, तो उससे देश का, समाज का कल्याण हो सकता है। अपने निज स्वरूप में क्षुद्रत्व, अज्ञान, छोटा विचार, राग, द्वेष को पहचानिए। इससे क्लेश, दुःख, चिन्ता आ जाती है। जीवन में क्लेश, चिन्ता, दुःख का कारण बनता है। लेकिन यह वस्तुतः प्रयोग और उपयोग की बात है। सर्जन (डाक्टर) अगर चाकू का ठीक से उपयोग करके आदमी को ठीक कर देता है, तो वहीं कोई गुंडा-बदमाश उसी चाकू से लूटमार करता है, किसी की जान लेता है। अतः यह प्रयोग अथवा उपयोग की बात है। उसी प्रकार अगर पैसा है और उसका सदुपयोग करें तो दुःखियों के दुःख का निवारण कर सकते हैं। उसी पैसों से अगर हम घूस, कपट, कालाबाजार करें, तो अधर्म, झूठ-कपट और अत्याचार बढ़ता है। पैसा तो एक ही है। पैसे का कोई अपराध नहीं है। वह नैतिकता-अनैतिकता से रहित है। वह तो साक्षात् लक्ष्मी का स्वरूप है। पैसे से मानव कैसा सम्बंध रखता है, सदुपयोग करता है या दुरुपयोग करता है, महत्त्व इस बात का है। अगर व्यक्ति पैसे का सदुपयोग करे तो मानव-कल्याण हो सकता है, औरों का हित हो सकता हैं। अगर दुरुपयोग किया तो औरों का बुरा हो सकता है। इसी प्रकार से विज्ञान है, छापाखाना है। इसमें अगर अच्छी चीज छापें, तो उससे मानव में जागृति आती है। अगर इसमें गंदी चीज छापें तो आदमी के चरित्र का अधोपतन हो सकता है। अगर गन्दा साहित्य छापें तो नवयुवकों के, विद्यार्थियों के चरित्र का पतन हो सकता है। विज्ञान तो अच्छा है, लेकिन विज्ञान अभिशाप बनेगा या वरदान, यह उसके उपयोग पर निर्भर करता है। अन्त में उसी प्रकार, ईश्वर ने सृष्टि की, सुन्दर सृष्टि की, रचना करके मानव को सौंप दी और मानव को स्वतंत्र बुद्धि दे दी, विचार शक्ति दे दी। तुम अपनी विचार शक्ति, सद्बुद्धि, विवेक और सद्विचार का इस प्रकार ठीक से प्रयोग करो कि, इस प्रपंच में जो कुछ है, उसमें कैसे और भी अधिक सुचारु रूप से इसका सदुपयोग हो सकता है। लेकिन अगर तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और तुम अत्यधिक इच्छा, वासना, और लालसाओं के गुलाम बन जाते हो, तो इस सुन्दर सृष्टि का पतन हो जाएगा। अतः अपने आप को अभी से ही सम्भाल लें।

हरि ॐ तत् सत् !